उन्होंने अपनी ईमानदार और प्रतिबन्द्ध रचना दृष्टि से दूर करने का सफल प्रयास किया। प्रेमचन्द जानते थे कि समाज में सबसे शोषित और पीड़ित और दलित प्राणी किसान और मजदूर वर्ग हैं। उन्होंने उनकी इस दयनीय स्थिति को निकट से देखा और जीवनपर्यन्त उन्हें इससे मुक्ति दिलाने के लिए कलम की लड़ाई लड़ते रहे।

सामाजिक विषयों पर लिखी उनकी रचनाओं में करुणा और संवेदना प्रमुख रूप से उभर कर आए हैं। 'ईदगाह', 'बूढ़ी काकी' आदि कहानियां इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

प्रेमचन्द साहित्यक वादों से परे थे। उन्होंने समसामयिक परिवेश के प्रभावों को ग्रहण करते हुए भी अपने सार्वदेशीय एंव सार्वकालिक मानवीय दृष्टिकोण को ही अपने साहित्य में प्राथमिकता दी। उनके सिद्धान्त एवं विचारों को किसी वाद की परिधि में नहीं बांधा जा सकता। मानवीय परिसीमाओं में जो भी विचारधारा आई, चाहे वह प्रगतिशील विचारधारा हो या गांधीवादी विचारधारा, उन्होंने स्वीकार की। वे सोद्देश्य साहित्य के पक्षधर हैं। प्रेमचन्द ने जिस सहजता से सामाजिक समस्याओं को अपनी कहानियों में उठाया है, उतनी ही सहजता से उन्हें अभिव्यक्ति भी प्रदान की है। उनका मानना हैं– 'जो जन-साधारण का है, वह जन साधारण की भाषा में लिखता है' यद्यपि उनकी आरम्भिक कृतियों में उर्दू बाहुल्य भाषा का प्रयोग मिलता है पर धीरे-धीरे वे जनभाषा के निकट आते गए और उपेक्षित समाज की भाषा, मुहावरे, लोकोक्तियों से भाषा को समृद्ध किया।

पाठ सारांश

नमक का दारोगा प्रेमचन्द की प्रमुख कहानी है। इसमें वंशीधर की ईमानदारी और कर्तव्य के प्रति समर्पण को दिखाया गया है। पिता ने उन्हें समझाया व घर की हालात का पूरा वर्णन सुनाया। पिता ने कहा, 'वेतन मनुष्य देता है इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती, ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती है। विवेक से काम लेना। मुंशी वंशीधर को दारोगा बनकर आये छः महीने भी नहीं हुए थे। नमक के सिपाही पहरा दे रहे थे। अचानक गाड़ियों की कतार आ गई।

पूछने पर पता चला कि ये गाड़ियाँ पं. अलोपीदीन के है। वे बड़े ही प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। ऊँचे लोगों तक पहुँच थी। इलाके के प्रतिष्ठित जमींदार थे। विनती करने पर भी दारोगा ने गाड़ियाँ नहीं छोड़ी और पं. आलोपीदीन को जेल भेज दिया। रिश्वत देने पर भी नहीं छोड़ा। अन्त में पंडित आलोपीदीन जेल से छूट जाते हैं। वंशीधर का नौकरी छूट जाता है। अन्त में पंडित जी के कहने पर उनके मैनेजर बने।

अंतः यह कहानी ईमानदारी की प्रतिष्ठा की कहानी है।

Scanned with CamScanner

प्रेमचन्द (सन् 1880-1936)

भारतीय साहित्यकारों में कथा सम्राट के रूप में प्रेमचन्द का एक विशिष्ट स्थान है। अपनी कृतियों के माध्यम से उन्होंने युग के विराट फलक पर राजनीतिक सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक सभी स्तरों पर एक नई दृष्टि को वाणी दी, जो केवल अपने युग तक ही सीमित नहीं, वरन् आने वाले समय में भी उसकी उतनी ही उपयोगिता बनी रहीं। उन्होंने कथा साहित्य को तिलस्म और एयारी के आकर्षण से निकालकर उसे समाज से जोड़ा। औद्योगीकरण के कारण ग्रामीण अंचल का शहरों में पलायन और उससे उत्पन्न समस्याओं को कथाकार दृष्टि ने पहले से ही भाप लिया था। इसीलिए उनके साहित्य में ग्रामीण जन-जीवन का विशद् वर्णन मिलता हैं।

31 जुलाई सन् 1880 में जन्मे प्रेमचन्द बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी थे। उनका असली नाम धनपतराय श्रीवास्तव था। कुशाग्र बुद्धि प्रेमचन्द ने उर्दू, फारसी और अंग्रेजी भाषा तथा उसके साहित्य का बड़े मनोयोग से अध्ययन किया। स्कूल में हैडमास्टरी की और स्वतन्त्रता आन्दोलन के तहत छोड़ दी। उनके विपुल साहित्य में उपन्यास, कहानी, निबन्ध, नाटक, सम्पादन बहुत कुछ समाहित हैं। उन्होंने लगभग तीन सौ कहानियाँ लिखी, जो मानसरोवर के आठ खण्डों में संकलित हैं। 'सोजे वतन' प्रसिद्ध संग्रह ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर लिया था। उनकी बहुचर्चित कृतियों में-

उपन्यास- 'सेवा सदन', 'वरदान', 'प्रेमाश्रम', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'निर्मला', 'प्रतिज्ञा', 'गबन', 'कर्मभूमि', 'गोदान', और 'मंगलसूत्र' (अपूर्ण)।

कहानी-'मानसरोवर'- आठ खण्डों में संकलित तीन सौ कहानियां।

निबन्ध-'संग्राम', 'कर्बला'।

सम्पादन-'माधुरी', 'हंस', 'जागरण' पत्रिकाएं।

आलोचना-'साहित्य का उद्देश्य'

प्रेमचन्द उन प्रगतिशील लेखकों में है, जिन्होंने भारतीय जनजीवन को निकट से देखा और उनकी समस्याओं को संवेदनात्मक धरातल पर अपने साहित्य में उतारा। उनका साहित्य पीड़ित मानव के प्रति करुणा, संवेदना के स्वर उद्घोषित करता है और उन्हें सेवामार्ग की ओर अग्रसर करता है। उनके साहित्य में सामान्य जन-जीवन, किसान, मजदूर वर्ग का दुख-दर्द, शोषण, उत्पीड़न प्रतिबिम्बित हुआ हैं। समाज में फैली विषमता, पराधीनता, रूढ़िवादिता और साम्प्रदायिक वैमनस्य के फैले कोहरे को

Scanned with CamScanner